International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 08-06-2025, Accepted: 09-07-2025, Published: 24-07-2025 Volume 11, Issue 3, 2025, Page No. 24-26

प्रगतिवादी कविता: सामाजिक अन्याय की आलोचना

Vinay Kumar
Department of Hindi, Delhi University, New Delhi, India

सारांश
यह शोध आलेख हिंदी साहित्य में प्रगतिवादी कविता की सामाजिक भूमिका को रेखांकित करता है। प्रगतिवाद एक साहित्यिक आंदोलन के साथ–साथ एक सामाजिक चेतना भी है, जिसकी शुरुआत 1936 में लखनऊ में प्रेमचंद की अध्यक्षता में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना के साथ मानी जाती है। इस धारा का मूल उद्देश्य समाज में व्याप्त शोषण, असमानता, अन्याय, पूंजीवाद और पितृसत्ता का विरोध करना तथा दलित, गरीब, मजदूर, किसान और नारी वर्ग की पीड़ा को स्वर देना है।
यहां प्रगतिवादी कविता केवल आलोचना तक सीमित नहीं है, बल्कि यह परिवर्तन की प्रेरणा भी देती है। यह साहित्यिक धारा एक सामाजिक दस्तावेज बनकर सामने आती है, जो न केवल सौंदर्य की दृष्टि से बल्कि सामाजिक उद्देश्य की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

मूल शब्दः प्रगतिवाद, प्रगतिवादी कविता, समाज, अन्याय, शोषक, शोषित, दलित वर्ग, पूंजीपति, मजदूर, स्त्री आदि

प्रस्तावना

प्रगतिवादी कविता मूलतः एक सामाजिक आंदोलन है। जो सामाजिक परिवर्तन और नये पन की माँग करता है। मार्क्सवादी दर्शन के आलोक में सामाजिक चेतना और भाव– बोध को अपना लक्ष्य बनाकर चली हुई काव्य परम्परा को प्रगतिवाद कहा गया है।

सन् 1936 ईस्वी का वर्ष हिन्दी साहित्य के इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। इसी वर्ष लखनऊ में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई जिसकी अध्यक्षता प्रेमचंद जी द्वारा की गई। इसके बाद प्रगतिवादी कवि समाज में हो रहे शोषण मुखर होकर विरोध करने लगे। प्रगतिवादी कवि प्राचीन कवियों के विरुद्ध नवीनता का समर्थक है चाहे बात भाव पक्ष की हो या कला पक्ष की। वर्षों से चली आ रही रूढ़िगत परंपराओं को बेड़ियों से मुक्त करने का प्रयास प्रगतिवाद से कुछ पहले छावावाद के कुछ प्रगतिशील विचार रखने वाले कवियों ने कर दिया था।
कविवर सुमित्रा नंदन पंत जी लिखते हैं कि–

द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र ।
हे स्रस्त–ध्वस्त! हे शुष्क–गीर्ण। हिम–ताप–पीत, मधुवात–भीत,
तुम वीत–राग, जड़, पुराचीन !!

(संदर्भ: "युगांत", सुमित्रा नंदन पंत, इंद्र प्रिंटिंग वर्क्स अल्मोड़ा, पृष्ठ संख्या 1)

यह एक विचारधारात्मक काव्यधारा है जो अपने से पहले की धारा अर्थात् छायावादी कल्पनाओं के विरोधस्वरूप जन्मी। अतः विरोध के स्वरूप वहीं से दिखने शुरू हो गए थे जहां पंत, निराला और उसके बाद दिनकर जी के काव्य में प्रगतिवादी प्रवृत्तियां देखने को मिलती हैं।
लेकिन केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, रांघेय राघव और त्रिलोचन शास्त्री आदि मौलिक प्रगतिवादी साहित्यकार हैं। इनके अतिरिक्त रामेश्वर शुक्ल अंचल और नरेंद्र शर्मा ने भी प्रेम धारा छोड़कर प्रगतिवादी विचारधारा या काव्य की ओर मुख मोड़ लिया था।
छायावादी काव्य की कल्पना के विरोध स्वरूप प्रगतिवादी कविता में कवियों ने समाज में हो रहे अन्याय के विरुद्ध हुंकार भरी और सामाजिक यथार्थ के चित्रण को मूल रूप में स्वीकार किया। तथा प्रगतिवादियों ने शोषकों द्वारा शोषित समाज के प्रत्येक वर्ग यथारू बच्चे – बूढ़े –जवान, किसान, गरीब, दलित, नारी आदि के यथार्थ चित्रण पर विशेष बल दिया है। ये समाज के सुनहले पहलुओं को अपने काव्य में स्थान देने से बचे हैं क्योंकि सौन्दर्य, सुख–शांति तो पूंजीवादी व्यवस्था के प्रतीक हैं।
इनकी किसानों और मजदूरों की दुरावस्था अर्थात् उनके टूटे–फूटे, छान–छप्परों, कच्चे घरों एवं माटी में सने भूखे–रोते–बिलबिलाते बच्चों के प्रति गहरी संवेदना रही है। जिसकी अभिव्यक्ति हम प्रगतिवादी कवियों के काव्य में सचित्र देख सकते हैं।उसी सामाजिक यथार्थ का एक पहलू दिनकर जी की पंक्तियों के माध्यम से दृष्टव्य है:

स्वानों को मिलता दूध – भात,
भूखे बालक अकुलाते हैं।
मां की हड्डी से चिपक,
ठिठुर जाड़ों की रात बिताते हैं।
युवती के लज्जा वासन बेंच,
जब ब्याज चुकाए जाते हैं।
मालिक जब तेल – फुलेलों पर,
पानी सा द्रव्य बहाते हैं।
पापी महलों का अहंकार,
देता मुझको तब आमंत्रण।
झन–झन–झन–झन झन–झनन–झनन।।

(संदर्भ: "रश्मिरथी", दिनकर, पृष्ठ 62, लोकभारती प्रकाशन)

प्रगतिवादी कवि पूंजीपतियों के धुर – विरोधी रहे हैं वे सामाजिक अन्याय की आलोचना करने में कभी पीछे नहीं रहते हैं अपितु पीड़ित वर्ग की आवाज को पुर्जोर तरीके से उठाते हैं। इन कवियों का मानना है कि पूंजीपति वर्ग अधिक लाभान्वित होने के लिए गरीबों एवं मजदूरों को कम वेतन देकर उनका हक मारते हैं अर्थात् उनका शोषण करते हैं। इसलिए प्रगतिवादी कवियों की आवाज पूंजीपतियों और जमींदारों के विरुद्ध तथा शोषितों एवं पीड़ितों के पक्ष में उठती दिखाई देती है । कवियों ने इस भाव को अपनी कविताओं में अलग – अलग रूपों या शब्दों में व्यक्त किया है। जिसमें निराला जी का पूंजीपतियों पर यह आक्रोश देखते बनता है:

अबे सुन बे गुलाब
भूल मत जो पाई खुशबू रंग–ओ–आब।
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा है कैपिटलिस्ट।

(संदर्भ: "निराला रचनावली", राजकमल प्रकाशन, भाग 2, पृष्ठ संख्या 44)

प्रगतिवादी विचारों से ओत – प्रोत

नागार्जुन सामाजिक अन्याय के विरुद्ध अत्यंत मुखर होकर मजदूर अर्थात सर्वहारा के साथ पूर्ण रूप से खड़े हुए दिखाई पड़ते है। ये ऐसे कवि हैं जो पूंजीपतियों, जमींदारों के साथ– साथ वैचारिक वैमनस्य या मनमुटाव पैदा करने वाले नेताओं एवं तथाकथित बुद्धिजीवियों पर भी अपनी कलम की धारा तेज रखते हैं वे अपनी विचारधारा से भी इतर जाकर आम जन मानस के हक की बात करते हुए कहते है कि:

"क्या है दक्षिण, क्या है वाम,
जनता को रोटी से काम"

सामाजिक अन्याय के विरुद्ध इस लड़ाई में प्रगतिवादी कवियों विशेषतः महाकवि नागार्जुन जी ने पीड़ितों या शोषित के मन में न ही बेचारगी को जगाया और न ही उनकी कविताओं में हथियारबंद क्रांतिकारी कभी नायक रहा। उन्होंने जब – जब क्रांति का चित्र खींचा अधिकांशतः उसमें जनता की सामूहिक भूमिका को प्राथमिक दी। उनकी काव्य पंक्तियों इसका प्रमाण हैं:

"गोबर मंहगू वचनमा और चातुरी चमार
सब छीन ले रहे स्वाधिकार
आगे बढ़कर सब जूझ रहे
रहनुमा बन गए लाखों के
अपना त्रिशंकु छोड़ इन्हीं का साथ दे रहा मध्य वर्ग
तुम जला गए हो मशाल।"

(संदर्भ: "लो, देखो अपना चमत्कार", पुरानी जूतियों का कोरस काव्य संग्रह)

समाज का एक प्रमुख अंग नारी, प्रगतिवादी कवि उसके शोषण तथा उपेक्षा के प्रति काफी सचेत दिखाई देते हैं। प्रगतिवादियों की दृष्टि में किसान और के समान ही नारी भी शोषित हैं। उनका मानना है कि स्त्री युगो से सामंतवादी कारा में पुरुषों की दासता की लौहमयी जंजीरों से जकड़ी हैं। सुमित्रानंदन पंत जी नारी मुक्ति की कामना करते हुए लिखते हैं कि–

मुक्त करो नारी को
चिरबंदिनी नारी को
युग युग की कारा से
जननी सखी प्यारी को।

(संदर्भ: "युगवाणी", पृष्ठ संख्या 46)

प्रगतिवादी कवि नारी की स्वतंत्रता चाहता है। उसकी मुक्ति चाहता है क्योंकि स्त्रियां अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व खो चुकी हैं। वे पुरुषों की वासना तृप्ति का उपकरण मात्र बनकर रह गई हैं।

योनि नहीं है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित,
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित
(संदर्भ: "नारी", ग्राम्या काव्य संग्रह , पृष्ठ संख्या 85)

किसने और मजदूरों पर हुए शोषण और अत्याचारों की आलोचना भी प्रगतिवादी कवि करते हैं। हमें सारी सुख सुविधाएं मुहैया कराने वाले गरीब मजदूरी की दुरावस्था का एक चित्र खींचते हुए केदारनाथ अग्रवाल जी कहते हैं कि–

ओ मजदूर!
तो मजदूर!!
तू ही सब चीजों का कर्ता,
तू ही सब चीजों से दूर

(संदर्भ: "तीसरा सप्तक", पृष्ठ 119)

प्रगतिवादी कवि जहां एक तरफ शोषितों पर एक हुए सामाजिक अन्याय की आलोचना करते हुए है वहीं दूसरी तरफ उस शोषित समाज को स्वावलंबी बनाकर उसका उद्धार करना चाहते हैं–

मैंने उसको जब–जब देखा लोहा देखा
लोहा जैसे तपते देखा, गलती देखा, ढलते देखा
मैंने उसको गोली जैसे चलते देखा।

(संदर्भ: "केदार ग्रंथावली", भाग 2 पृष्ठ 161)

सामाजिक अन्याय का दृश्य झेलते हुए दलीतो के पक्षधर प्रगतिशील विचारों के कवि रहे हैं। निराला जी ने इलाहाबाद के पथ पर नामक कविता में तीन चित्र एक साथ खींचकर प्रगतिवाद सामाजिक अन्याय की आलोचना नामक इस शोध पत्र को अत्यंत अर्थपूर्ण बना दिया है इस कविता में पत्थर तोड़ने वाली एक मजदूरनी होने के साथ – साथ एक दलित है और महिला भी। यहां निराला जी ने जो प्रस्तुत किया है वह शोषित सर्वधारा एवं संपूर्ण दलित वर्ग के प्रतिनिधि पात्र का चित्र है:

वह तोड़ती पत्थर;
देखा मैने उसे इलाहाबाद के पथ पर –
बह तोड़ती पत्थर।

कोई न छायादार पेड़
वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार
श्याम तन, भर बंध यौवन,
नत नयन, प्रिय – कर्म– रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार– बार प्रहार ,
सामने तरु– मलिका अट्टालिका, प्राकार

(संदर्भ: "अनामिका कविता संग्रह")

प्रगतिवादी काव्यधार के महान हस्ताक्षर दलितों पर हुए सामाजिक अन्याय पर मुखर रहे हैं और मुक्ति – संघर्ष की उनकी मात्रा में जूझारु हस्तछेप रहे हैं ।जिसका सबसे पुष्ट प्रमाण है– उनकी कविता
"हरिजनगाथा"

निष्कर्ष

प्रगतिवादी कविता हिन्दी साहित्य का वह यथार्थवादी पक्ष है, जिसमें कवि समाज के सजग प्रहरी बनकर शोषण के विरुद्ध चेतना का दीप जलाते हैं। ये कवि केवल आलोचना नहीं करते, अपितु जन–जन को परिवर्तन की प्रेरणा भी देते हैं। पूंजीवाद, सामंतवाद और पितृसत्ता जैसी संस्थाओं का विरोध करते हुए वे

जनसामान्य के पक्ष में खड़े होते हैं। इसलिए प्रगतिवादी कविता न केवल एक साहित्यिक आंदोलन है, बल्कि वह एक सामाजिक दस्तावेज भी है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. ग्रंथ/पुस्तक लेखक/संपादक प्रकाशक पृष्ठ संख्या
2. हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेंद्र, डॉ. हरदयाल ग्रंथशिल्पी पृ. 410–425
3. मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य ,डॉ. रामविलास शर्मा राजकमल पृ. 22, 67, 102
4. आधुनिक साहित्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ, डॉ. नगेंद्र ,राजपाल एंड संस पृ. 145–160
5. प्रगतिवादी, विजय शंकर मल्ल, साहित्य भवन, पृ. 88–96
6. कवि निराला, डॉ. नंद दुलारे वाजपेयी, साहित्य भवन पृ. 132–145
7. इतिहास और आलोचना, डॉ. नामवर सिंह, राजकमल पृ. 93, 108
8. युगधारा, नागार्जुन, राजकमल पृ. 90–115
9. केदार ग्रंथावली, संपादक: डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी राजकमल भाग 2, पृ. 119, 161
10. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां – डॉ नामवर सिंह
11. प्रगतिवादी – रेखा अवस्थी